समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम्।।२९।।

समम्=समभाव से; **पश्यन्**=देखता हुआ; **हि**=निश्चित रूप से; **सर्वत्र**=सब में; **समवस्थितम्**=समान रूप से स्थित; **ईश्वरम्**=परमात्मा को; **न हिनस्ति**=अधःपतन को नहीं पहुँचता; **आत्मना**=चित्त के द्वारा; **आत्मानम्**=अपने आत्मा का; **ततः याति**=इससे प्राप्त होता है; **पराम्**=परम; **गतिम्**=गति को।

अनुवाद

जो पुरुष परमात्मा को जीवमात्र में समभाव से स्थित देखता है, वह चित्त के द्वारा अपने अधःपतन का कारण नहीं बनता और इस प्रकार परमगति को प्राप्त हो जाता है।।२९।।

तात्पर्य

यदि जीवात्मा समझ जाय कि यह संसार दुःख ही दुःख से भरा है, तो वह अपने सच्चिदानन्दमय जीवन में फिर स्थित हो सकता है। जो यह जानता है कि श्रीभगवान् परमात्मा रूप से सर्वत्र विद्यमान हैं, अर्थात् जो जीवमात्र में श्रीभगवान् की संनिधि को देख सकता है, वह अपने अधःपतन का कारण नहीं बनता और परिणाम में शनैः-शनैः वैकुण्ठ-जगत् को प्राप्त हो जाता है। सामान्यतः मन विषयरूपी स्वार्थों में लगा रहता है। उसके परमात्मा की ओर मुड़ते ही ज्ञान हो सकता है।

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति।।३०।।

प्रकृत्या=प्रकृति के द्वारा; **एव**=ही; **च**=तथा; **कर्माणि**=कर्म; **क्रियमाणानि**=किए हुए; **सर्वशः**=सब प्रकार से; **यः**=जो; **पश्यति**=देखता है; **तथा**=तथा; **आत्मानम्**=आत्मा को; **अकर्तारम्**=अकर्ता; **सः**=वह; **पश्यति**=यथार्थ देखता है।

अनुवाद

जो पुरुष सम्पूर्ण कर्मों को प्रकृति से उत्पन्न देह द्वारा किए हुए देखता है और आत्मा को अकर्ता देखता है, वही यथार्थ में देखता है।।३०।।

तात्पर्य

देह की उत्पत्ति परमात्मा की अध्यक्षता में प्रकृति के द्वारा होती है। अतः देह के सम्बन्ध में हो रही सम्पूर्ण क्रियाओं का कर्ता जीव नहीं है। जो कुछ भी दुःख-सुख के लिए कर्म किया जाता है, वह सब शरीर के स्वभाववश होता है; आत्मा इन सम्पूर्ण शारीरिक कर्मों से बिल्कुल परे है। देह पूर्ववासना के अनुसार मिलता है। यह देह वास्तव में एक यन्त्र जैसा है, जिसे श्रीभगवान् ने जीव की कामना-पूर्ति के लिए रचा है। जीव की अनादि भोगवासना के कारण ही उसे सुख-दुःख भोगने के लिए इस विषम संसार में भेजा गया है। स्वरूप के सम्बन्ध में इस दिव्य दृष्टि के जागृत होने